International Journal of Sanskrit Research 2020; 6(3): 96-99

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2020; 6(3): 96-99
© 2020 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 20-08-2020
Accepted: 23-09-2020

डॉ. विनोद चौधरी
(सहायक प्राध्यापक), टी० एन० बी० कॉलेज, संस्कृत विभाग, ति० मॉ० भागलपुर विश्वविद्यालय भागलपुर, दिल्ली, भारत

Corresponding Author:
डॉ. विनोद चौधरी
(सहायक प्राध्यापक), टी० एन० बी० कॉलेज, संस्कृत विभाग, ति० मॉ० भागलपुर विश्वविद्यालय भागलपुर, दिल्ली, भारत

वैदिक साहित्य में राष्ट्रनिर्माण के दिशा–निर्देशक तत्त्व

डॉ. विनोद चौधरी

प्रस्तावना

शोध सार–भारत विविध संस्कृति का देश है। मानवीय–मूल्यों की भित्ति पर आधारित हमारी राष्ट्रीयता, सर्वमंगला संस्कृति को वैदिक युग से ही बिम्बित करती आ रही हैं। मानवीय–मूल्यों के साथ लोकतांत्रिक मूल्यों का समन्वयं कर उदान्त राष्ट्रीयता की जो आधारशिला रखी गई है, उसमें त्याग, सेवा, स्नेह, सहिष्णुता और सामाजिक संसक्ति के पंच प्राण डाले गये थे।

सत्यं वृहद्दृतमुग्रं दीक्षा तपो ब्रह्म यज्ञः पृथिवीं धारयन्ति।
स नो भूतस्य भव्ययस्य पत्न्युरूं लोकं पृथिवीं नः कृणोतु।। [1]

मातृ भूमि के आठ गुण हैं, सत्य, वृद्धि, न्याय व्यवहार, क्षात्र, तेज, दक्षता, तप, ज्ञान और शुभकर्म। वास्तव में मातृभूमि की स्वतंत्रता का संरक्षरण इन्ही आठ श्रेष्ठ सद्गुणों से होता हैं। सत्यनिष्ठा संवर्धन न्याय–व्यवहार, प्रबलक्षत्र, तेज, कर्त्तव्यदक्षता, शीतउष्ण सहने की शक्ति, ज्ञान–विज्ञान और श्रेष्ठों का सत्कार जिस राष्ट्र में विद्यमान है वही राष्ट्र सच्चा राष्ट्र हैं। जिस भूखण्ड के निवासियों में ये आठ गुण पाये जाते हैं वही भुखण्ड वहाँ के लोगों की भूत, वर्त्तमान और भविष्यकालीन अवस्था का संरक्षण करता है। अतीत में जितना पीछे देख सकते है देखें, भविष्य की राह मिलती हैं। भविष्य के सपने बुनने में अतीत ही इतिहास को दृष्टि देने का काम करती हैं। राष्ट्र–निर्माण निमित्त, 'एक सत्य विप्राः बहुधा वदन्ति।'

अर्थात् ईश्वर एक है, विद्वान लोग उसे बहुत नामों से पुकारते हैं। यही व्याप्त विचार स्तातन्त्रय और सर्वपंथ समभाव का आधार हैं। वेदों में राष्ट्रनिर्माण के दिशानिर्देशक तत्त्व बिखरे पड़े हैं।

सूत्र शब्द–मानवीय मूल्यों की भीत्ति, धार्मिक सहभाव, ज्ञानामृत, गुणकर्मणा विभाजन, विश्वजनीन, एकताबद्ध। विधि–विशलेषण समन्वयात्मक, विधायक पद्धिति में लघुशोध सर्वांगीण है।

भूमिका–आज विश्व का महानतम भारतीय जनतंत्र अनियंत्रित उपभावेतावाद, अविश्वास, अपराध, अत्याचार, भ्रष्टाचार, जातिगत–विद्वेष, अराजकता के दौर से गुजरता अपने में कसक, आह, वेदना, व्यथा समेटे कल के सपने की राह तलाश रहा है। आखिर ऐसी कौन सी परिस्थिति या हालात हैं कि सर्वांड्गीण विकास की राह पर अग्रसर होने के बावजूद जनमानस में असंतोष और अविश्वास चरम पर हैं। भ्रष्टचार के खिलाफ देश उबल रहा हैं। राजनीतिक परिदृश्य छलकपट, अपराध और मूल्यहीन समझौता परस्ती का दृश्य उपस्थित करती हैं। जातिविहीन, सम्प्रदायहीन, शोषण–दोहन से मुक्त कदाचार रहित समाज के सपने तो दिखाये जाते हैं पर ये सारे लुभावने नारे सत्ता तक पहुँचाने की सीढ़ियाँ मात्र हैं। सत्तासीन होते ही फिर वही भाई भतीजावाद, कुनवापरस्ती, कुर्सी पकड़ की तिकड़म का दुष्चक्र प्रारंभ हो जाता हैं और सामान्य जन हताश और ठगा हुआ महशूस करता हैं। ये राष्ट्रनिर्माण के बाधक तत्त्व हैं। समाज में जहाँ जात–पात के बन्धन ढ़ीले होते जा रहे हैं वहाँ वोट की राजनैतिक डोरी ने जातियाँ को नयी ताकत से जकड़ लिया है। पहले जहाँ जाति को रोटी–रोटी बाँधती थी, अब रोटी, बेटी और वोट तीनों मिलकर बाँधते हैं। जातिप्रथा से हम सभी अभिशप्त है, जातिप्रथा के विषवृक्ष को समूल उखाड़े बिना सबल राष्ट्र का निर्माण संभव नहीं एतदर्थ जाति तोड़ो आन्दोलन की आवश्यकता हैं। देश में अराजक शक्तियाँ सक्रिय है, इनका हमला राजनीतिक मुद्दों पर कम, धर्म, संस्कृति और इस देश को एक करने वालों ताकतों पर ज्यादा है, आज की नई पीढ़ी को देश की एकता के मूल से परिचित कराना जरूरी है। अकर्मन्यता, भ्रष्टाचार, बेरोजकारी, कुपोषण, वर्ग व जातिभेद, रूढ़िवादिता जैसी बन्धनों को तोड़ना होगा। बीमारी, भुखमरी, शिक्षा आदि ज्वलन्त मुद्दे है, जिनके समाधान की ओर सम्यक् ध्यान देकर सबलराष्ट्र का निर्माण संभव हैं।

विषय वस्तु–आदर्श प्रस्तुत करना किसी भी युग का काल में नेता या शासकवर्ग का कार्य है, जिससे राष्ट्र–निर्माण में सहायता मिलती है। वैदिक ऋषियों ने नेता शासक राजा के लिए निश्चित मानक, प्रतिमान रखे उनके लिए भी सीमा एवं मर्यादा का निर्धारण किया उन ऋृषियों की कसौटी पर आज की शासन व्यवस्था नेता को परखें तो स्वयंमेव विदित हो जाएगा कि ऋृषि चिंतन आज भी प्रासंगिक, अनुकरणीय, मर्यादा की रेखा खीचनेवाला हैं। वैदिक संस्कृति का आधार

विश्बंधुत्व, श्रेष्ठगुणों का ग्रहणकरना, दुर्गुणों का परित्याग, उदात्त–सहिष्णुता मैत्रीभाव हैं। वर्त्तमान में हमारा राजनीतिक चिंतन अस्त–व्यस्त, हमारी उदारभावनाएँ संकुचित हो गई है नैतिक मूल्य नीचे गिर गये है। सावधानी से हमें अपने प्राचीन संस्कृति के उन अंगों को चुनना है जो वर्त्तमान की समस्याओं को सुलझाने में समर्थ हो।

'जनं विभ्रती बहुधा विवाचसं नाना धर्माणं पृथिवी यथौकसम्।
सहस्त्रं धारा द्रविणस्य ये दुहां ध्रुवे धेनुरनपस्फरन्ती।। [2]

पृथिवी सभी मनुष्यों की रक्षा करती है, जब वे अनेक धर्मो और अनेक भाषाओं के होने पर भी इसप्रकार से मिलकर रहा करते है जैसे एक घर में घरवाले मिल कर रहा करते हैं जैसे गायें निश्चित रीति से दूध की अनेक धारायें दिया करती हैं। धार्मिक सहभाव अथवा सामाजिक न्याय की प्राप्ति के लिए जिन साधनों का आश्रय लिया गया है, उस द्वेष से समाज में अशांति और हिंसा की उत्त्पत्ति होती हैं। वर्गसंघर्ष अथवा वर्ण संघर्ष आदि से समाज में उथ पुथल, हलचल तो अवश्य पैदा हो जाती है, पर सुख किसी भी एक दल या समूह को नहीं मिल पाता। कभी एक को दबना पड़ता है, कभी दूसरे को। राष्ट्रनिर्माण के लिए वैदिक ऋृषियो ने सबसे एक आत्मीयता का भाव अनुभव करने का आदेश दिया था, जो जितना बड़ा बनाया गया, उस पर उतना ही अधिक उत्तरदायित्व रखा गया था।

अज्येष्ठासो अकनिष्ठासः एते सं भ्रातरो वावृधुः सौभगाय।
युवा पिता स्वपारूद्रं सुदुधा पृश्नि सुदिना मरूद्भ्यः।। [3]

सब मनुष्य रंग, जाति और नश्ल भेद के बिना भाई–भाई है, उनमें से कोई बड़ा नहीं, कोई छोटा नहीं, वे सब मिलकर सौभाग्य की वृद्धि के लिए उन्नतिशील हो। शक्ति सम्पन्न, सर्वरक्षक और सबको मर्यादा में रखनेवाला परमेश्वर उनका पिता और अनेक प्रकार की धन–धान्य देनेवाली पृथिवी उनकी माता हैं। भ्रातृभाव स्थिर रखने के लिये आवश्यक है कि राष्ट्र के सभी नागरिक समझें कि हम एक माता–पिता के पुत्र हैं।

संवैधानिक प्रणाली के अनुरूप राष्ट्रनिर्माण सुशासन के लिए शासनतंत्र के न्यायकारी होने का निर्देश वैदिक मंत्रों में हैं। राजा को महान ऋत–सत्य का रक्षक बताया गया हैं। [4]

'एवं द्यावापृथिवी उपस्थे मा क्षुधन्मातृषत्। [5] हे! सूर्य और भूमि तुमदोनों की गोद में जीव भूखा–प्यासा न मरे। न्याय के पक्षपातरहित शासन प्रबन्ध वैदिक ऋृषियों ने वैदिक मंत्रों की भांति अध्यात्मिक वरदान के रूप में प्रतिष्ठित किया हैं। अधिकार वं कर्त्तव्यों को निरूपित करने का संदेश दिया हैं। सभी धर्म नियंत्रित होकर अपने कर्त्तव्य पथों पर आरूढ़ थें। सत्धर्म यह अस्तित्व का धर्म है, सर्वधर्म सदभाव उसकी प्रकृति हैं। धर्म समाज सेवा की प्रेरणा देती हैं और समाजसेवा से ही आत्मसाक्षात्कार अथवा ईश्वर प्राप्ति संभव हैं।

अर्य्यमा णो अदितिर्यंज्ञियासीऽदब्धानि वरूणदय व्रतानि। [7]

वर्त्तमान परिस्थिति में समरसता, सर्वधर्म समभाव की बातें हो रही है। आसुरी सम्पत्ति बढ़ रही हैं और मानवोचित दैवी सम्पत्ति का ह्रास हो रहा हैं। इससे विश्व में सर्वत्र अशांति और संघर्ष दीख–पड़ रहा हैं और विश्व के मानव आज जैसे–जैसे कार्यो में रत है उनसे दैवी सम्पत्ति घटकर आसुरी सम्पत्ति ही बढ़ेगी। अतः यथार्थ रूपेण कल्याण की प्राप्ति केवल शास्मोक्त सनातन धर्म के आचरण से होना चाहिए।

घृति क्षमा दमोऽस्तेयं शौचामिन्द्रियनिग्रह।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणांणं।।
युयोक्त यो अनपत्यानि यन्तौः प्रजावान्न पशुनाँ अस्तु मातृ में।

डा0 राममनोहर लोहिया के मतानुसार भी धर्म जहाँ तक हिंसात्मक संघर्ष उत्पन्न करता हैं अथवा सम्पत्ति जातिप्रथा, नारी आदि की दृष्टि से यथास्थिति का समर्थन करता है, वहाँ तक अफीम की गोली है, जहाँ तक वह सदाचार की दृष्टि से नैतिक और सामाजिक शिक्षा दें अथवा भूतदयावाद और समाधिनत अनुशासन दिखाने वहाँ तक उसको राजनीति से संयुक्त करना आवश्यक है। डा0 लोहिया के अनुसार प्यासे को पानी देना, भूखे को रोटी और गृहहीनों को निवास देना ही सच्चा धर्म हैं। मानव को हिन्दू, मुस्लिम, ईसाई को खास रिवाजों और समूहों में बँधे धर्मो से ऊपर उठकर अपनी दृष्टि को व्यापक बनाना चाहिए और निर्भरता के साथ मानवधर्म का सच्चा उपासक बनना चाहिए। [9]

राष्ट्र निर्माण हेतु शासन का कर्त्तव्य गरीबी उन्मूलन, जनकल्यान एवं सुशासन हैं, जिससे सर्वत्र शान्ति का साम्राज्य हो –

निर्लक्षम्यं ललाम्यं निरराति सुवामसि।
अथ या भ्रद्रा तानिनः प्रजाया अराति नयामसि।। [10]

वैदिक साहित्य में सबल राष्ट्र का निर्माण के लिए शासन का लक्ष्य–दिशा निर्देश किया गया है – [11] हे राजन्! शासक, उच्चनेताओं राक्षसों का हनन करो, व्यवस्था भंग करनेवालों को वश में करो। जीतो दुर्भाग्य को, दरिद्रता को, अज्ञानता को, विरोध को दूर करो, हमारे लिए सब वीरों से युक्त धन को प्राप्त कराओ, देवताओं के योग्य अर्थात् पवित्र और सम्पन्न ज्ञान को, यश को प्रजा में भरो।

वैदिक चिंतन में राजनीति में विद्वान् को पथप्रदर्शक माना गया हैं। अशिक्षितों अथवा अल्पशिक्षितों को राजनीति से पृथक रखा गया हैं। आचरण, सदाचार, देशभक्ति ही नेता के मानक तत्व थे। समीति राष्ट्रवादी और कर्त्तव्यनिष्ठ व्यक्ति को ही राज्यपद के लिए चुनती थी।

नेतृत्व का भ्रष्ट आचरण वैदिक चिन्तकों को भी स्वीकार्य नहीं था। यह सबल राष्ट्र निर्माण में आज भी बाधक है – हे राजन ! तुझको लाकर मैने स्वीकार किया हैं। सभा के मध्य तू वर्त्तमान हुआ हैं। निश्चित बुद्धि और निश्चित स्वभाववाला होकर स्थिर रहो। सब प्रजाएँ तेरी कामना करे। राज्यतुझसे कभी भ्रष्ट न होवे। [12]

अन्यत्र– शतपथब्राह्मण के अनुसार राज्याभिषेक के समय राज्य शासन को यह कहा जाता था कि यह राज्य तुझे कृषि के लिए, क्षेम के लिए, समृद्धि और पुष्टि के लिए सौंपा गया हैं। तुम इसके अचल एवं दृढ़संचालन नियम का धारण कर्त्ता हों। [13]

सच्चा नेतृत्व संसार के जीवन के लिए प्रेम के आँसू बहाते है, हिंसारहित व्यवहार से विविध प्रकार से ले चलते है और लम्बी प्रबन्ध क्रिया के साथ प्रकाशमान होते हैं।

जीतं रूदन्ति विनयन्त्यध्वरं दीर्घा मन प्रतितिदीघ्युर्नरः।
राष्ट्रनिर्माण के लिए कुछ निर्देश प्रशासन के लिए दिए गए है– [14]

अधोगत पुरूष को अवश्य उठावें। अशिक्षितों में शिक्षा का प्रसार प्रशासन का मौलिक कर्त्तव्य हैं।

'अयं कविरः कविषु प्रचेता मर्तष्वग्निःस्मृतो निधाथि।।'

ज्ञानी ज्ञानामृत में अधिष्ठित व्यक्ति को अज्ञानियों में बैठकर उन्हें ज्ञान प्रदान करे। राष्ट्र निर्माण के लिए अन्याय का प्रतिकार प्रशासन द्वारा होना चाहिए। [15] राष्ट्रनायक को चाहिये कि वह जनता के भूख–प्यास को मिटावे। क्षितीनां व्यजुषक धुरू धो जीव सेथाः अथर्ववेद [16] में प्रशासन के लक्ष्य निर्धारित किये गये हैं –

लोककल्याण के लिए भोग्य पदार्थो का वितरण सभी मनुष्य में समान रूप से होना चाहिए। अन्न, जल का उपभाग मनुष्य में समान रूप से होना चाहिए, अन्नो का विभाजन समान हो।

यजुर्वेद [17] में कल्याणकारी राज्य के आदर्श स्वरूप का वर्णन आया है – राष्ट्र में तेज विद्वान् और तेजस्वी ब्राह्मण उत्पन्न हो। क्षत्रिय, शूरवीर, रणधीर महारथी हों। गौवें दूध देनेवाली हो, बैल बलवान हो। तुरंग (घोड़े) तीव्रगामी हो। स्त्रियाँ रूपवान और गुणवाली हो। रथ पर स्थित वीर विजयशीला हो। सभा में गुणवान और वीरयुवक हो। जब–जब प्रजा कामना करें तब–तब वृष्टि हो। औषधियाँ, वनस्पतियाँ, फलें और पकें जिनसे सूबे को योगक्षेम प्राप्त हो। सामवेद में [18] कहा गया–मुझे पवित्रता शक्ति तथा यज्ञमय जीवन प्राप्त हो, मेरे जीवन में कुछ न कुछ लोकहित का कार्य चलता रहे, मैं अपने में ही रमा न रह जाऊँ, दूसरों

के दुख में प्रवेश कर सकूँ। मानव मात्र के जीवन का उद्देश्य एवं आदर्श मंत्र में निरूपित हैं। शासक से भी इन्हीं गुणों से युक्त नीतियों के परिपालन की अपेक्षा की जाती है। वेदों में इस प्रकार शासन को सुचारू रूप से चलाने की दिशा दी गई है, जो विकसित राजनीति का परिचाल है। इसके राष्ट्रनिर्माण की दिशा को बल मिलता है। राष्ट्र की रक्षा में और उसकी महत्ता में अनेक ऋचाएँ पर्यवसित है – मातृभूमि की सेवा करो। [19]

भूमि को नमस्कार है, मातृ भूमि को नमस्कार हैं। [20]

हम अपने राष्ट्र में सावधान होकर नेता बनें। [21] पृथिवी माता अर्थात् मातृ भूमि, मुझ पुत्र के लिये दूध आदि पुस्टिकारक पदार्थ प्रदान करें। [22] भूमि (स्वदेश) मेरी माता हैं, मैं उसका पुत्र हूँ। [23]

हे मातृ भूमि ! तू मुझे अच्छी तरह प्रतिष्ठित करके रख। [24]
सहृदयं सांमनस्यम विद्वषं कृणोमि वः।
अन्यो अन्यमपि हर्यत वत्सं जात मिवाध्न्या।। [25]

एक हृदयता, एक मनता, निर्वेरता, तुम्हारे लिए मैं करता हूँ, एक दूसरे को सब ओर से तुम प्रीति चाहो, जैसे न मारने योग्य गौ उत्पन्न बछड़े को प्यार करती हैं। मंत्र में प्राणिमात्र को परस्पर स्नेह सूत्र में बँधने का सन्देश दें।

मातृ भूमि की रक्षा हेतु आत्मबलिदान करने के लिए सदा तत्पर रहें–
उपस्थास्ते अनमीवा अयक्ष्मा अस्मभयं सन्तु पृथिवि प्रसूताः।
दीर्घं न आयुः प्रतिबुध्यमाना वयं तुभ्यं बलिहृतः स्याम।। [26]

हे मातृ भूमि! तेरी सेवा करनेवाले हम नीरोग और आरोग्यपूर्ण हो। तुमसे उत्पन्न हुए समस्त भोग हमें प्राप्त हों, हम ज्ञानी बनकर दीर्घायु हों तथा तेरी सुरक्षा–हेतु अपना आत्मोत्सर्ग करने के लिए भी सदा संनद्ध रहें।

वैदिक साहित्य में इस सत्य के प्रमाण हैं कि वर्णव्यवस्था का निर्माण कार्य विभाजन के लिए किया गया था। उसमें छोटे–बड़े ऊँच नीच का कोई भाव नहीं था। सहयोग के आधार पर सामाजिक–विभाजन ही लक्ष्य था। शतपथ ब्राह्मण एवं सूत्र साहित्य में शूद्रौ को अस्पृश्य एवं हेय दृष्टि से देखने की कुप्रथा का बीजारोपण हुआ। जन्मना जातिप्रथा की शुरूआत से कर्म की प्रतिष्ठा मन्द होती गयी। शनैः–शनैः जन्मना जातिप्रथा, अस्पृश्यता, धार्मिक–कट्टरता ने सामाजिक सद्भावना को छिन्न–भिन्न किया। समाज में जाति के नाम पर शोषण के मानदण्ड स्थापित हुए। संकुचित विचारधारा का प्रसार हुआ। जातिप्रथा के माध्यम से शोषण कर्त्ताओं के चहेरे बदल गए, परिणामस्वरूप गुणकर्मानुसार आधारित वैदिक वर्ण–व्यवस्था राजनीति व चिंतन में आलोचनाओं का केन्द्र बिन्दु बना हुआ हैं। जातिप्रथा ने दलितों, आदिवासियों और शूद्रों को न केवल शारीरिक श्रम करनेवो सेवक, गरीब और समाज में तिरस्कृत या अपमानित बनाया बल्कि उन्हे, तेजस्विता मनस्विता से सर्वथा वंचित किया। आधुनिक सन्दर्भ में जातीय वैमनस्य की दुराग्रहपूर्ण कहानियाँ, जाति की जकड़न, जाति की राजनीति और जाति–तोड़ो आन्दोलन के विचार की दृष्टि से भारत कहाँ खड़ा है ? हम लोग खोज नहीं पा रहे हैं। राजनीति जातीय–अस्मिता और परिवारवाद की ओर क्यों बढ़ रही हैं। पिछले 68 वर्षों में हम अपने को सर्वोदय से बहुजन, बहुजन से प्रभुजन बनने में ज्यादा आसान पा रहे हैं। जाति–ब्राण्ड अक्षुण बना हुआ हैं। वर्ण व्यवस्था में हमे जातियों मे तोड़ दिया हैं। राजनीति नें हमे व्यक्ति से वोटर बना दिया हैं। आज की जाति व्यवस्था भी राजनीति में भीतरी गुप्तगति और बदलते शक्ति समिकरणो का द्योतक हैं, जिससे निजी महत्त्वाकांक्षाओ को नई राह मिल रही हैं। वहीं उसमें समग्र राष्ट्रीय सपनो के लिए कोई जगह नहीं हैं। हर जाति के अपने स्वार्थो के लिए कुछ लोग जाति अहंकार और कुछ अन्य जातियों के प्रति तिरस्कार को बढ़ावा देने का कार्य जातीय संगठन के जरिए करने की कोशिस कर रहे है जो राष्ट्रीय समता में बाधक हैं। चुनावी राजनीति में जीतने के लिए राजनीतिक दल जातिवाद का कार्ड खेलते हैं, भारतीय नागरिको और राजनीतिक दलो के सामने जातिवाद और राष्ट्रीयता में किसी एक को चुनने की व्यवस्था हैं लेकिन क्या इस देश के वंचितो का वास्तव में सशक्तिकरण हो पाया है ? इसके उत्तर में हमे शिक्षा, रोजगार, व्यवसाय और सम्पत्ति के पैमाने पर सशक्तिकरण को परिभाषित करना होगा।

जातिप्रथा उन्मुलन के सुझाव–राष्ट्र निर्माण हेतु वैदिक संस्कृति के विश्वजनीन पहलू, विश्व प्रेम की इस भावना को जो मानवमात्र के प्रति प्रेम उपजाती है, फिर अपना ले तो अपने देश को चरमोत्कर्ष पर पहुँचा सकते हैं। जीव की पूर्णता सामुहिक कल्याण में हैं, सामुहिक सुख साधन व पारस्परिक प्रेम के लिए वैदिक संस्कृत में जितनी अभिव्यक्तियाँ हैं

वे मानव कल्याण के महान संदेश हैं। [27, 28] आज समय की मांग है कि लोग हिन्दुत्व का उच्च परिचय दे जिसमें हास्यास्पद जात–पात न हो। जातीय घृणा अनुसूचित जाति के लोगो के उपेक्षा, असमान की भावना वैदिक चिंतन की मूल भावना के विपरीत और धार्मिक हैं। जात–पात के वैमनस्य के विलख कर मानवीय स्वरूप को उजागर करने की आवश्यकता हैं। इसके अभाव में राष्ट्र निर्माण की एकता की सूत्र कमजोर होते हैं। समरसता का भाव क्षीण होता है जाति विरादरी का भाव बढ़ता है जिससे संप्रदायवाद और क्षेत्रवाद की भावना को बल मिलता हैं। सत्य सास्त्र के निन्दित और सदाचार विरोधी लोकोचार्य के अधीन हो जाना ही जाति के अदह पतन का कारण हैं। [29] जो समाज सौर्य और ओज से पूरित होगा वह समाज अवश्य ही शोषण से मुक्त होगा क्योकि बलशाली समाज में किसी प्रकार का शोषण का स्थान नही रहता हैं। शिक्षा, स्वभाषा, लोगो को न्याय और अन्याय समझने की शक्ति, समस्तिगत जीवन जीने का कौशल एवं मानव मूलयो को वृद्धी करने वाले तत्व उन्नत और विकसीत समाज की स्थापना में सहायक होंगे। देश मे जाति तोड़ने की प्रमुखता को स्वीकार कर एक से एक कदम उठाने होंगे। ''जाति प्रथा का श्राप तब तक चलेगा जबतक उँची जगह पर बैठे आदमी अपने कुल और जाति को बढ़ाऐंगे। छोटे और बड़े का फर्क और दीवारे केवल भाषा, भूषा, भवन, भूजन और बसती नही हैं। सोचने और बोलने की दीवार जबतक तोड़ी नही जायेगी तबतक जाति प्रथा का श्राप समाप्त नही होगा। [30] डा0 लोहिया कहते है जातिप्रथा मिटाने का कोई तरीका अपनाना होगा। दो हजार साल से जो दबे है उन्हे विशेष अवसर देना होगा। असली दुनिया तभी बसेगी जब मनुष्य सचमुच वर्ण संकर अथवा दोगला हो जायेगा। [31] जाति सिर्फ घोषणा मात्र से नही टुटेगी केवल रक्त का मिश्रण ही स्वजन और नीज होने का भाव उत्पन्न कर सकता हैं। जहाँ समाज कट–कट कर टुकड़े–टुकड़े हो रहा हैं वहाँ इकट्ठा करने वाली शक्ति के रूप में विवाह एक अनिवार्य आवश्यकता हो जाती हैं इसके सिवाय और कोई भी बात जाति भेद को मिटाने का काम नही कर सकती। सामाजिक हमलो में एक तरफ तो विशेषतः गाँव में अन्तभौज हो सकता है इसी तरह अन्तर्विवाह। अन्तर्विवाह को तो अनिवार्य लक्ष्य नही माना जा सकता है जैसे अन्तर्भोज को पर सरकार को यह पूरा अधिकार है कि वह अन्तर्विवाह करने वाले की बीच अपना नौकर चुने। खान–पान में भेदभाव करने वालो को सरकारी नौकरी में कोई तरजीह न दी जाय। अन्य विचार निम्नवत हो सकते है –

1. वैसे ही व्यक्ति सरकारी पदो पर काम करेंगे जो जाति तोड़ने में शागिर्द होंगे।
2. सरकारी कर्मचारी किसी तरह के काम करने वाले को जाति तोड़ने में हिस्सा बटाना होगा। हिस्सा बटाने का अर्थ है कि अपने परिवार में अन्तर्जातीय विवाह करना या कराना होगा।
3. लोकसभा या विधानसभा मे वैसे लोग ही उम्मीदवार होंगे जिनके परिवार में स्वयं या पुत्र का अन्तर्जातीय विवाह हुआ हो।
4. ग्राम पंचायत के मुखिया या सरपंच, जिला परिषदो के पदो पर उम्मीदवार होने वाले को भी जाति तोड़ने का शर्त रहेगा।
5. जाति तोड़ने वाले बच्चो को पढ़ाई में जनसाधारण से अधिक सुविधा देने की योजना का सुरूआत करना होगा।
6. जाति तोड़ने वाले को सरकारी नौकरी हेतु दो वर्ष उर्म की वृद्धि।
7. इसी काम के लिए सरकारी काम में कुछ रियायत या दो वर्षो तक ब्याजहीन कर्ज।
8. सरकार को चाहिए जातिवाद को जड़ से समाप्त करने के लिए प्रत्येक व्यक्ति के नाम के आगे पीछे जुड़े रहने वाले जातिवोधक शब्द को कानून पास करके सरकारी रेकर्ड से समाप्त कर दें। चाहे वे रेकर्ड वोटर लिस्ट हो, शिक्षण संस्थान हो या सरकारी दफ्तर में हो।
9. राजनीतिज्ञो को सर्वप्रथम अन्तर्जातीय विवाह को करने या परिवार में कराने के लिए मानस तैयार करना होगा। विचार से राजनीतिज्ञ, बुद्धिजीवि इसके पक्ष में है, इसलिए सरकार मानस बनाकर सफलता प्राप्त कर सकती हैं।

निष्कर्ष – सम्प्रति राष्ट्र निर्माण के लिए विशेष अवसर के सिद्धांत को अब दीर्घकालीक रणनीति के हिसाब से देखना चाहिए ताकि सामाजिक भेदभाव से मुक्ति मिल सके। पहली प्राथमिकता यह होनी चाहिए कि सबो को बराबरी की स्कूली शिक्षा मिले ताकि गैर बराबरी की स्पर्धा और ड्रॉप्ट आउट की समस्या खत्म होगी। दूसरी ओर हमें स्वीकार करना होगा की भेदभाव बहुआयामी होता हैं। यह जाति आधारित भी होता हैं। लिंग और क्षेत्रतीयता और आर्थिक आधारित भी। चौथी हम जो करे उसका मकसद लोगो को एकताबद्ध करना होना चाहिए उन्हे विभाजित करना नहीं।

सन्दर्भ संकेत

1. अथर्ववेद – 12.01–01
2. आचार्य नरेन्द्र देव, राष्ट्रीयता और समाजवाद पृ0 331. प्रकाशक ज्ञानमंदिर लिमिटेड बनारस–संस्करण संवत् 2006.
3. अथर्ववेद (12.1.45)
4. ऋग्वेद (5.60.5)
5. ऋग्वेद (7.64.2)
6. अथर्ववेद (7.29.4)
7. ऋग्वेद (3.54.18)
8. क्तण् स्वीपं डंतग ळंदकीप ंदक ेवबपंसपेउ चंहम 375ण्
9. डा0 लोहिया धर्म पर एक दृष्टि पृ0 4.
10. अथर्ववेद (1.18.1)
11. ऋग्वेद 10.76.4
    अपहत् रक्षसो भड्गुरावतः स्कभायत नित्रृतिं सेधतामतिम्।
    आ नो रयिं सर्ववीरं सुनोतन देव्याय यत्र श्लोकमद्रयः।।
12. अथर्ववेद (6.88.3)
    ध्रुवोऽच्युतः प्रवृणहि शत्रून्छत्रूयतोऽधरान् पादयः।
    सर्वदिशः संमन्सः सघ्रचीर्ध्रुवायते समितिः कल्पतामिहः।।
13. अथर्ववेद (6.87.1)
14. शतपथब्राह्मण (5.2.1)
15. अथर्ववेद (4.13.1) उतदेवा अवहितं देव उन्नयथा पुनः।
16. ऋग्वेद (1.46.6) या नः पीपरदश्विना ज्योतिष्मती तमस्तिरः।
    तामस्मे रासाथामिषक्।।
17. अथर्ववेद (3.30.6) समानी प्रपासह वो अन्न भागः समाने योक्त्रे सह वो युनजिम।
    सम्यंचोऽग्निं सपर्यतारा नाभिमिवाभितः।।
18. यजुर्वेद – (22.22)
19. सामवेद – 1.8.95 (पूर्वाचिक)
20. ऋग्वेद (10.18.10) उप सर्प मातरं भूमिम्।
21. यजुर्वेद (9.22) – नमो मात्रे पृथिव्यै नमो मात्रे पृथिव्या।
22. यजुर्वेद 9.23 वयं राष्ट्रे जागृयाम पुरोहिताः।
23. अथर्ववेद (12.1.10) – सा नो भूमिर्वि सृजतां माता पुत्राय मेपसः।
24. अथर्ववेद–(12.1.12) – माता भूमिः पुत्रो अहं पृथिव्याः।
25. अथर्ववेद (12.1.63) भूमे मातर्नि धेहि मा भद्रया सुप्रतिस्तिम्।
26. अथर्ववेद (3.30.1)
27. अथर्ववेद (12.1.62)
28. ऋग्वेद (191.10.02) संगच्छध्वं सं वंदध्वं सं वो मनांसि जानताम्।।
    देवा भागं यथा पूर्व संजानाना उपासते।।
29. ऋग्वेद (191.10.4) समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः।
30. समानमस्तु वो मनः यथा वः सुसहासति।।
31. स्वामी विवेकानंद साहित्यं संचयन पृ0 232 हिन्दुधर्म और श्री रामकृष्ण।
32. ओंकार शरद–भारतमाता धरती माता पृ0 233 (डा0 राम मनोहर लोहिया)